अध्याय – १

दिल्ली घराने का उद्‌भव एवं विकास

दिल्ली घराना तबले का मूल घराना माना जाता हैं । मूलतः तबले के सभी घरानों पर विचार किया जाए तो यह देखने में आता है कि दिल्ली घराना प्राचीन एवं आद्य घराना माना जाता है । अतः यह बात स्पष्ट होती है कि दिल्ली घराना सभी घरानों का पिता माना गया है । पुराने बुजुर्गोने जिन जिन घरानों की नीव डाली उन उस्तादों ने अपने स्वयं का नाम न देते हुए अपने प्रांत का या अपने गाँव का नाम दिया । जिसके कारण आज सभी घरानों के नाम देखे तो यदि वह गाँव है या तो राज्य है । कुछ विद्रानों का कथन यह हैं कि इसकी शुरुआत ३०० से ३२५ वर्ष पूर्व हो चुकी हैं । धीरे–धीरे समाज में बदलाव आते गए और कालांतरानुसार हिन्दु कलाकारों का सबसे बड़ा परिवर्तन दिखाई देने लगा ।

शोधार्थी ने इस विषय पर अनेक दृष्टिकोण से चिंतन एवं मनन किया तो मालुम हुआ है कि, केवल धर्म परिप्रेक्ष्य में ही बदलाव नहीं आऐ, किन्तु वादन में भी परिवर्तन दिखाई देने लगे । यदि शोधार्थी अपनी पुष्टि करे तो दिल्ली का ईतिहास बहोत ही पुराना माना गया है एवं इसे जीवित रखने में कई मूर्धन्य कलाकारों का महत्व पूर्ण योगदान रहा है ।

१:१ दिल्ली घराने की भौगोलिक दृष्टि :

दिल्ली घराने को, घराने की मान्यता प्राप्त हुई । अब दिल्ली शहर एवं उस से जुडे हुए राज्य के भौगोलिक दृष्टि पर शोधार्थी अपनी पुष्टि करेंगे ।

१:१:१ उत्तर प्रदेश का संक्षिप्त इतिहास :

''उत्तरप्रदेश भारत का सबसे अधिक जनसंख्या धरानेवाला प्रदेश है । यह राज्य आधुनिक भारत के इतिहास और राजनीति का केन्द्र बिन्दु रहा है । उत्तर प्रदेश के इतिहास को पाँच भागो में विभाजित किया गया है ।

(१) प्रागैतिहासिक एवं पूर्व वैदिक काल (ई.स. ६०० पूर्व तक)

(२) हिन्दु–बौद्ध काल (ई.स. ६०० से ई.स. १२०० तक)

(३) मध्यकाल (ई.स. १२०० से १८५७ तक –मुस्लिम काल)

(४) ब्रिटिश काल (ई.स. १८५७ से ई.स. १९४७ तक)

(५) स्वातंत्र्योत्तर काल (ई.स. १९४७ से अब तक)'' [१]

१ः१ः२ दिल्ली शहर का इतिहास ः

''दिल्ली को भारतीय महाकाव्य 'महाभारत' में 'इन्द्रप्रस्थ' की राजधानी माना जाता है । १९वी शताब्दी के आरंभ तक दिल्ली में इन्द्रप्रस्थ नामक गाँव था । भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के अनुसार कहीं प्राप्त चित्रों के आधार पर दिल्ली की आयु १००० वर्ष पुराना शहरमाना जाता है, जिसे महाभारत के समय से जोड़ा जाता है । पुरातात्विक प्रमाण के आधार पर इसे मौर्य काल (ई.स. ३००) से जोड़ा है । सन् १९६६ में अशोक का एक शिलालेख (ई.स. २७३ से ३००) दिल्ली में श्रीनिवासपुरी में पाया गया । तोमर वंश के राजा अनंगपाल को दिल्ली का संस्थापक मान जाता है । उसने ही लाल कोट का निर्माण किया ऐसा माना जाता है । दिल्ली में तोमर वंश का शासनकाल (ई.स. ९०० से १२००) तक माना जाता है । 'दिल्ली' या 'दिल्ही' का शब्द प्रयोग सर्व प्रथम उदयपुर में प्राप्त ई.स. ११७० में शिलालेख पर पाया गया । ई.स. १२०६ के बाद दिल्ली भारत की राजधानी बनी ।''[२]

१ः२ दिल्ली घराने का उद्‌गम ः

भारतीय संगीत की समस्त विधा में तबला यह वाद्य अत्यंत लोकप्रिय वाद्य है । दिल्ली घराने का उद्‌गम को तबले के इतिहास से जोड़ा जाता है । तबले की उत्पति के बारे में अनेक मत मतान्तर है । जिस में प्रचलित मतानुसार तबले का आविष्कार अमीर खुसरोने किया है ।

यह एक केवल मान्यता है । इस में अधिकांश सत्य तथ्य पर आधारित हैं, तो कई असत्य पर जिसकी पूर्ति विद्वानों ने अपनी अपनी पुस्तकों में की है ।

शोधार्थी के गहन अध्यन करने के बाद यह ज्ञात चलता है कि तबले की उत्पत्ति के बारे में आज कोई ठोस विधान प्राप्त नहीं हुआ है । यदि इतिहास पर दृष्टिपात करे तो इतिहास इस विषय पर मौन है । अर्थात् तबले की उत्पत्ति पर ठोस विधान देना एक अतिशोयक्ति होगी ।

१:२:१ दिल्ली घराने के मूल स्थापक :

''दिल्ली घराने के मूल स्थापक उस्ताद सिध्धार खाँ ढारी को माना जाता है । उस्ताद सिध्धार खाँ ने पखावज का आधार लेकर तबले में अनेक संशोधन किए । इस समय ख्याल गायकी का उद्भव हो रहा था । इस गायन शैली की संगती करने के लिऐ उपयुक्त ताल वाद्य की आवश्यकता थी इसके लिए तबला वाद्य ही उपयुक्त था और इस तबला वाद्य को सभी गुणी कलाकारों नें अपनाया लिया ।''[३]

१:२:२ दिल्ली एक अपभ्रंश शब्द :

दिल्ली घराने पर शोधार्थी ने गहन अध्यन करने के बाद दृष्टिपात किया तो यह दिखाई देता है कि 'दिल्ली' शब्द आधुनिक है । ''किन्तु इतिहास पर दृष्टिपात करने से मूलतः 'दहलीज' यह शब्द नियुक्त किया है। अर्थात् किसी भी क्षेत्र में आगमन करने से पूर्व उसका संबंध दहलीज से जोड़ा जाता हैं । अर्थात् दिल्ली, 'दहलीज', 'देहली' और आज का अपभ्रंश शब्द 'दिल्ली' है ।''[४]

१:२:३ दिल्ली के सर्वप्रथम तबलावादक :

''तबलावादक के विकास और प्रचार में अमीर खुसरोजी का विशेष योगदान रहा है । परंतु इनकी वंश परंपरा का इतिहास में कोई उल्लेख मौजूद नहीं हैं किन्तु उ. सिध्धार खाँ की

परंपरा का इतिहास में उल्लेख है । किन्तु उनके पूर्वजों का इतिहास में उल्लेख नहीं है । अतः तबलावाद्य के विकास और प्रचार में खुसरो खाँ का विशेष योगदान रहा है और इन्होंने तबले पर उगलियों के रख–रखाव में परिवर्तन किये और चाटी प्रधान कुछ नवीन विस्तारक्षम रचनाएँ जैसे पेशकार, कायदा, रेला तथा अविस्तारक्षम रचना जैसे की गत, टुकड़े, मुखड़े आदि की रचना करके एक क्रान्तिकारी कदम उठाया और तबला वादन की कला को स्वतंत्र रूप में प्रतिष्ठित किया । इस योगदान के कारण उनका नाम 'खुसरो खाँ' से 'सुधार खाँ' हुआ । दिल्ली के निवासी थे इसीलिए दिल्ली घराने के सर्व प्रथम तबलावादक उत्साद 'सिध्धार खाँ' या 'सुधार खाँ' माने जाते हैं । जिनका समय ई.स. १७१० के आसपास माना जाता है ।''[५]

१:२:४ बाज का अर्थ :

'''बाज' शब्द का तात्पर्य वाद्य की वादनशैली से है । बाज याने बजाना । किस प्रकार से वाद्य बजाना है उसकी 'तकनीक' को सामान्य लोकभाषा में बाज शब्द से जोड़ा जाता हैं । जिसकी उत्पत्ति 'वाद्य' शब्द से हुई है । संस्कृत भाषा में यंत्र को बजाने की विधी को 'वाद्य' कहते हैं । इस प्रकार वाद्य से बाद्य, बाद्य से बाज्य और बाज्य से 'बाज' शब्द का उल्लेख मिलता है । दूसरे शब्दों में किसी वाद्य को बजाने की शैली, विधी को बाज कहा जाता है । तबले में बाज का संबंध, तबले को बजाने की प्रक्रिया, वादनशैली, तबले पर हाथ रखने का ढंग एवं ऊँगलीयों के वर्णो को निकास से जोड़ना है ।''[६]

१:२:४:१ तबले के विभिन्न बाज :

ध्वनि निकास के आधार पर तबले से बाज का सीधा संबंध है तबले के अलग–अलग घरानों का जन्म उसके बाज के माध्यम से ही हुआ है । जेसे तबले की बनावट में परिवर्तन होता गया तथा उसके साथ तबले से उत्पन्न होने वाले ध्वनियों और तबले के नाद में भी परिवर्तन आता गया, इस प्रकार बाज का जन्म हुआ । ई.स. १७०० में भारत की प्रसिद्ध तथा देश की

वर्तमान राजधानी दिल्ली में मोहम्मद शाह रंगीले के शासन काल में उ. सिध्धार खाँ ने अभिजात संगीत में प्रवेश कर एक प्राचीन ताल वाद्य में परिवर्तन किया । पखावज एवं उस समय के समकालीन वाद्यों के बोल, बंदिश, भाषा तथा वादनशैली का आधार लेकर तबले पर नए बोल बंदिशो की रचना की । उ. सिध्धार खाँ दिल्ली के निवासी थे । अतः यह 'दिल्ली घराना' और 'दिल्ली बाज' के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

तबले के वादनशैली के आधार पर तबले के मुख्य दो बाज है ।

(१) पश्चिम या दिल्ली बाज

(२) पूरब बाज

पश्चिम बाज को 'बँद बाज' तथा पूरब बाज को 'खुला बाज' के नाम से भी जाना जाता है ।

(१) बँद बाज : यह बाज में दायाँ–बायाँ में से निर्माण होने वाला नाद की आँस मर्यादित होती है और यह स्वतंत्र तबला वादन का प्रमुख तत्व है कि जितनी बँद आँस, उतना वादन में तैयारी अधिक होती है । तबले में बजने वाले अक्षर की आँस मूलतः कम होने के कारण उसका परिणाम नष्ट होने से पूर्व दूसरा अक्षर का आधात आवश्यक होता हैं । इसलिए बँद बाज में कायदे और रेले अधिक है । बँद बाज में दायें में चाटी या किनार पर आधात को प्राधान्य दिया गया है । इसलिए वह शुद्ध नाद सुनने को मिलता है ।

(२) खुला बाज : यह बाज में बँद बाज के विरुद्ध में काम होता हैं । पखावज वाद्य की संपूर्ण छाप इस बाज पर दिखाई देती है । इसमें नाद निर्माण के लिए पखवाज वादन में संपूर्ण हाथ के पंजे का प्रयोग किया जाता है । इसलिए इसका नाद आँसदार होता है । इस बाज में वेग को (Speed) महत्व देने के कारण इस में गते, गत–परण, तोड़ा, चक्रदार आदि रचनाएँ अधिक प्रचलन में है । इस प्रकार बाज का निर्माण हुआ ।

''प्रारंभ में दोनो बाज का स्वीकार दिल्ली और लख्नौ घरानों के कलाकारों ने किया । इसलिए इन घरानों के नाम 'देहली' घराना अथवा 'देहली बाज' एवं 'लख्नौ घराना' अथवा

'पूरब बाज' के नाम दिए गए । जिसके अंतर्गत 'देहली घराना' 'बँद बाज' में समाविष्ट है ।''[७]

१:२:५ उ. सिध्धार खाँ एवं उनकी परंपरा :

उ. सिध्धार खाँ का 'ढारी' परंपरा में जन्म हुआ था । उनका जन्म किस शहर में हुआ था इस विषय पर इतिहास मौन है । परंतु यह सिद्ध हो चुका है कि इनका जन्म इ. १७०० के आसपास माना गया है । ढारी परंपरा को समझने से पूर्व यह जानना आवश्यक हो जाता है कि मुगल शासन के अंत तक मुगल शासकों के अंतर्गत संगीतज्ञो की कितनी श्रेणियों प्रचलित थी । मुलतः उस समय संगीतज्ञों की चार श्रेणियाँ अस्तित्व में थी ।

१:२:५: १ कलावन्त परंपरा :

ध्रुपद गायन एवं वीणा वादन करने वाले कलाकारो को 'कलावन्त' कहाँ जाता था । अमीर खुसरों के अनुसार जो गाते थे उन्हें 'कलावन्त' कहते थे । भजन और भक्तिरस से जीवननिर्वाह चलानेवाले कलाकारों को 'मिरासी' कहते थे । ढारी उन्हें कहते थे, जिनका परंपरा से गायक और वादन के रूप में जीवन निर्वाह चलता था । ढारी और मिरासी को गायन तथा नर्तक की संगत भी करनी पडती थी । वर्तमान युग के अनेक खानदानी उस्तादों के पूर्वज ढारी और मिरासी परंपरा के ही थे ।

अबुल फजल के अनुसार 'कलावन्त' का प्रधान कार्य ध्रुपद गाना था । बादशाह अकबर के युग में आये हुए कलावन्त तानसेन, मियाँ चाँद, बाबा रामदास, सबहान रंग, नायक चरचू, सूरदास जैसे कलाकार गायक थे । मोहम्मद शाह रंगीले के युग में सदारंग रहीम सेन ध्रुपद गायक के रूप में रहे । सदारंग और अदारंग दोनो बंधु गायक और बीनकार भी थे ।

श्रीपद वन्दोपाध्याय अपने कोश के अनुसार इस प्रकार से परिभाषा करते थे – सुसंप्रदायी कुशल ध्रुपद गायकी को ही कलावन्त कहाँ जाता है ।

१:२:५: २ कव्वाल परंपरा :

अमिर खुसरो द्वारा पर्शियन और भारतीय शैली के मिश्रण से उत्पन्न 'कौल' एवं 'तराना' गानेवाले कलाकारों की संताने, कालांतर में 'कव्वाल बच्चा' नाम से प्रसिद्ध हुए। १५ वे शतक में हुसैन शर्की द्वारा प्रवर्तित 'ख्याल' भी इसी वर्ग के द्वारा गाये गए। तभी से कव्वाल बच्चे, सूफियों के बीच कव्वाली के साथ ख्याल गाने लगे।

श्रीपद वन्दोपाध्याय जी के मतानुसार 'गजल और कव्वाली' गायन में कुशल गायकों को ही कव्वाल कहाँ जाता है। अहिन्दु गायको में ही अधिकतर कव्वाल होत है प्रायः इस्लाम धर्म के धार्मिक गीत गाया करते थे। अधुना सभी कव्वाली गाया करते हैं।

१:२:५: ३ मिरासी परंपरा :

बाई या तवायफ के साथ जो तत् वाद्य अथवा अवनद्य पर संगत करते हैं, उन्हें 'मिरासी' कहाँ जाता है।

१:२:५: ४ ढारी / ढाढी परंपरा :

''ढारी/ढाढी लोगों का यदि मूल व्यवसाय देखा जाये तो यह ज्ञात होगा है कि मूलतः ये लोग ढोल बजाते थे और वे लोग मूलतः पंजाब के थे। निम्न कथन से इनके व्यवसाय पर कुछ इस प्रकार के प्रमाण मिलते है। अबुल फजल के अनुसार ढाढी लोगों का मूल स्थान पंजाब था और वे सैनिको को उत्तेजित करने के लिए युद्धगान करते थे। वे ढोल बजाकर पंजाबी भाषा में शौर्य गीत गाया करते थे। ततपश्चात वे संगीत कला में भी पारंगत होने लगे। वे विभिन्न शैलियों के गायन तथा वादन में कुशल साबित हुए तथा शास्त्रीय संगीत का उच्च स्तरीय ज्ञान रखने लगे। इस जाति के संगीत कलाकारो को अकबर के दरबार में भी स्थान मिला और यहीं क्रम आगे चलता गया।''[८]

१:२:६ पखावज तथा दुक्कड के वर्णो का तबले में समावेश :

''तबला वाद्य के विकास में पखावज, दुक्कड, ढोलक, नक्कारा, ताशा जैसे अवनद्य वाद्य तथा लोक वाद्य की अपनी निजी विशेषता को समन्वित करके तबला वादन की कला में सौन्दर्य प्राप्त हुआ जिसका श्रेय उ. सिध्धार खाँ जी को जाता हैं ।'' [९]

१:२:६:१ पखावज :

तबले के महत्तम बोल, पखावज के बोलों पर आधारित है । तबले पर बजनेवाले अधिकांश बोल पखावज वाद्य से लिए गये है । इन में भी दाहिने हाथ से बजनेवाले बोल अधिक मात्रा में लिए गये है । दाये और बाये तबले पर बजाने के लिए जिन बोलो को पखावज से लिया गया वे इस प्रकार है ।

बायें के बोल :

धी, ट, ति, धा, ता. थुं, ड, दिं, ला, त्र, म, ण, क

बायें के बोल :

गे, धे, धा, कं, व

१:२:६:२ नक्कारा :

तबले पर बजनेवाले बोलों में 'नक्कारा' वाद्य के बोलो का भी योगदान रहा है जो दायें बायें से मिलकर ही बजते हैं यह बोल बँद बाज के होते हैं इन बोलों में एक विशेष प्रकार की गमक एवं लोच होती हैं ।

नक्कारे के बोल :

क्डाधिं, धिडनग, क्डां, धिनक, किड़नग, घ्ड़ां, धाड़धा, क्डधा, नड़, तड़ा, तत्, धाधा, धिनधा, किनता ।

इस प्रकार पखावज एवं नक्कारे के वर्ण जो तबले में लिए गये उसमें इन दोनों वाद्यों का प्रभाव तबले के बोलों में था परंतु दिल्ली बाज होने के कारण नक्कारे के वर्णो ने विशेष रूप से

दिल्ली बाज बनाने में उसके व्यक्तित्व को बनाने में अधिक प्रभावित किया । ऐसा शोधार्थी मानता है ।

१:३ दिल्ली घराने के प्रवर्तक एवं फरुखाबाद घराना :

दिल्ली घराने में उ. सिताब खाँ का समय फरुखाबाद घराने के समकालीन माना जाता है । उ. सिताब खाँ यह उ. सिध्धार खाँ के पोते थे । उनके पुत्रो में उ. घसीट खाँ, उ. बुगरा खाँ और तीसरे का नाम अज्ञात रहा । शोधार्थी का मानना यह है कि उ. सिध्धार खाँ ढारी की परंपरा एवं फरुखाबाद घराने के प्रवर्तक उ. हाजी विलायत अली खाँ के समय में करीबन ८० ले १०० साल का अन्तर माना गया है । निश्चित इन दो घरानों के अध्ययन करने से स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि इन दोनों घरानों के बीच अधिकतर निश्चित रूप से एक घराने का जन्म हुआ था और उसका नाम अजराड़ा घराना नियुक्त किया गया है ।

१:४ दिल्ली घराने का विकास :

दिल्ली घराना तबले का मूल घराना है । ''उ. सिध्धार खाँ की परंपरा में उनके पुत्र अज्ञात नामथा उनके शिष्य उ. मोदु खाँ जी लखनौ घराने के खलिफा हुए । उ. मोदु खाँ के शिष्य में पं. रामसहायजी हुए, जो बनारस घराने के मूल प्रवर्तक हुए । दुसरे उ. सिध्धार खाँ के शिष्य उ. बक्शु खाँ थे, जिनके शिष्य उ. हाजी विलायत अली खाँ थे । जिन्होने फरुखाबाद घराने के नींव डाली । उ. सिध्धार खाँ के तिसरे पुत्र उ. बूगरा खाँ थे, उनके पुत्र उ. सिताब खाँ और उ. गुलाब खाँ हुए । उ. सिताब खाँ की वंश परंपरा में उ. नजरअली खाँ और उ. कल्लू खाँ और उ. मीरु खाँ रहे । जिन्होने अजराड़ा घराने की नींव डाली । इस प्रकार प्रत्येक घराने की वंश परंपरा आगे बढ़ी, जो आज तक चलती आ रही है ।'' [१०]

अतः शोधार्थी का मानना है कि सभी घरानों का मूल तो दिल्ली घराना ही है । सभी घरानों के जो मूल प्रवर्तक है उन्होने अपने चिंतन से नये घराने की नींव ड़ाली, परंतु उन सभी

घरानों के उद्भव की प्रेरणा दिल्ली घराना ही है । इस तरह दिल्ली घराने का तो स्वतंत्र विकास हुआ, साथ–साथ अन्य घरानों का भी उद्भव और विकास हुआ ।

१:५ दिल्ली घराने में चतुश्र जाति एवं निकास :

दिल्ली घराने की अधिकतम रचनाएँ चतुश्र जाति में होती है । पेशकार, कायदा, गतें, चक्रदार, टुकडे, मुखड़े, रेले आदि चतुश्र जाति में बजाया जाता है । मिश्र जाति की रचनाओं का प्रयोग इस घराने में है परंतु प्रचलन में बहुत कम है । इस घराने में बायाँ के वादन निकास में तर्जनी और मध्यमा का समावेश किया जाता है। इस में पूरे पंजे का प्रयोग नहीं किया जाता है । दायें पर भी तर्जनी और मध्यमा ऊँगली का अधिक प्रयोग किया जाता है । अनामिका ऊँगली का प्रयोग बहुत कम दिखाई देता है । अर्थात् अनामिका का प्रयोग इस घराने में कदापि नहीं किया जाता ऐसा नहीं है । 'धिरधिर' शब्द पुड़ी के अन्दर के हिस्से में ही बजाया जाता है । दिल्ली बाज में 'ट' शब्द को तर्जनी ऊँगली से बजाने की परंपरा है । कुछ विद्वानो की राय में 'ट' शब्द की ध्वनि 'ति' शब्द की ध्वनि से भिन्न हो इसलिए 'ट' अक्षर अनामिका की मदद से बजाया जाता है । कुछ विद्वानो के अनुसार जब 'तिरकिट–तिरकिट' शब्द साथ में बजाया जाता है तब परंपरानुसार 'ट' अक्षर मध्यमा ऊँगली से बजाया जाता है । परंतु ऐसा करने से हाथ फँसता है । इसलिए 'तिरकिट–तिरकिट' बिना रुके गति के साथ बजाने के लिए 'ट' अक्षर को अनामिका की सहायता से बजाया जाता है । जिससे ध्वनि भी अल्स होती है और हाथ भी नहीं फँसता ।

१:६ उद्देश :

इस घराने की सभी रचनाएँ सुन्दर एवं कलात्मक रही है । पं. सुरेश तळवलकरजी के मतानुसार, 'जिस किसी व्यक्ति को यह प्रेरणा हुई की पंजे से बजनेवाला बाज यह ऊँगली से भी बजाया जा सकता है,' इस प्रेरणा का भारतीय संगीत में बहुत बड़ा योगदान है । इसी उद्देश से

इस घराने का उद्‌भव हुआ और जो भी रचनाएँ प्राप्त हुई उसे स्वतंत्र वादन के एक योग्य क्रम में कैसे बजाया जाये उसका भी योगदान दिल्ली घराने ने दिया है । क्योंकि स्वतंत्र वादन करने के कुछ नियम है, जो इस घराने ने दिए है, उस क्रमको लयनुसार वादन करने से एक सचोट पद्धति दिखाई पडती है और सुनने में भी कर्णप्रिय लगता है । अतः यह भी मुख्य उद्देश रहा होगा ।

शोधार्थी मानता है कि दिल्ली घराना यह तबला वाद्य का सर्वप्रथम घराना माना गया है । अतः पखावज वाद्य से हि एक नये वाद्य की पहचान हुई जो संगीत क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी प्रगति है । और तबला वाद्य का विकास करने हेतु एवं तबले की स्वतंत्र बंदिशों को उजागर करने का भी मुख्य उद्देश रहा होगा ।

१:७ **आवश्यकता** :

दिल्ली घराने पर दृष्टिपात करे तो, इस घराने का प्रारंभ इ.स. १७१० के आस–पास माना जाता है । अतः इससे पूर्व शोधार्थी के मन में यह प्रश्न उठता है कि इस घरानों की सभी रचनाएँ इससे पूर्व भी कही न कही बजाई जाती होंगी । अपितु, स्वतंत्र तबला वादन के विधिवत वादन पद्धति में एकल वादन प्रस्तुतिकरण क्रमानुसार इसी शताब्दी में हुआँ होगा ऐसा शोधार्थी का ठोस मत है । अर्थात् जिन मूर्धन्य कलाकारोने उन रचनाओं को संग्रहित करके अपने कुशल चिंतन से एक विधिवत क्रम में बांधने का महत्वपूर्ण कार्य किया और इसी कार्य को घराने का दरज्जा प्राप्त हो यही आवश्यकता महसूस की गई होगी । फलतः इस आवश्यकता को एक दरज्जा प्राप्त हुआ । अतः यह घराना दिल्ली घराने के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

१:८ **प्रयोग** :

दिल्ली घराने का एक संपूर्ण ढाँचा तैयार होने के बाद उसे मान्यता मिलने के लिए वह जनता समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक था इसलिए इस घराने के कलाकारोने सर्वप्रथम प्रयोग अपने बिरादरी में किया और उसी स्थान पर इस घराने को मान्यता प्राप्त हुई । और बाद में यह

स्वतंत्र वादन का सर्वप्रथम 'दिल्ली घराना' के रूप में विख्यात हुआँ।

१:९ सफलता :

दिल्ली घराने को तबले के घरानों में स्वतंत्र घराना के रूप में स्थान मिला। वर्तमान समय में भी इस घराने के मूर्धन्य कलाकार जिवित है और इस घराने का प्रचार–प्रसार कर रहे है। यही सबसे बड़ी सफलता है। क्योंकि किसी भी चीज का उद्‌भव होने के पश्यात् उसका जतन करना और उसके मूल्यो का आदर और उद्देश को कहीं नुकसान न होते हुए परंपरा को आगे बढ़ाना यह महत्वपूर्ण योगदान है। अतः दिल्ली घराने को सही रूप में सफलता प्राप्त हुई है।

पाद टिप्पणी :

(१) ईन्टरनेट वेबसाईट https://hi.wikipedia.org/wiki/उत्तर_प्रदेश_का_इतिहास

(२) ईन्टरनेट वेबसाईट https://hi.wikipedia.org/wiki/दिल्ली_का_इतिहास

(३) ऋषितोष, डॉ. कुमार, तबले का उद्‌गम एवं दिल्ली घराना, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, ISBN: 978-81-8457-645-0, पृ. १४

(४) साक्षात्कार : प्रोफे. डॉ. अजय अष्टपुत्रे, ८ जुलाई, २०१६, शाम ६ बजे

(५) op.cit. ऋषितोष, कुमार, पृ. १६–१७

(६) त्रिपाठी, डॉ. शिवेन्द्र, तबला विशारद, पृ. ५–६

(७) मुळगाँवकर, अरविंद, तबला, पोप्युलर प्रकाशन, मुंबई, ISBN : 978-81-7185-526-1, पृ. २६३

(८) साक्षात्कार : प्रोफे. डॉ. अजय अष्टपुत्रे, १ अगस्त, २०१६, शाम ८ बजे

(९) op.cit. ऋषितोष, कुमार, पृ. १७

(१०) op.cit. ऋषितोष, कुमार, पृ. १७